टिप्पणी

व्यक्तित्व–निर्माण में अध्यापक की भूमिका

❑ मुन्नेश कुमार एवं डॉ. जे.पी. बागची

अध्यापक राष्ट्रीय संस्कृति के चतुर माली होते हैं । वे संस्कारों की जड़ों में खाद देते हैं और अपने श्रम से सींच–सींच कर महाप्राण शक्तियां बनाते हैं । भारत में इन्हें आध्यात्मिक नेता और समाज–सुधारक स्वीकारा गया है। आज विज्ञान और प्रौद्योगिकी के इस युग में आवश्यकता इस बात की है कि अध्यापक अपनी गिरती छवि को सुधारें और बच्चों में वे मूल्य रोपें जो सदा से भारत की पहचान रहे हैं । जब बच्चे की आव से सारा चमन महक उठेगा तो माली की मेहनत सफल होगी । महकती फुलवारी की सुगन्ध से दिलों में खुशी भर जायेगी । प्रस्तुत लेख में लेखकों ने व्यक्तित्व–निर्माण में अध्यापक की भूमिका पर चर्चा की है ।

''भारत सहित सारे संसार के कष्ट का कारण यह है कि शिक्षा का संबंध नैतिक और आध्यात्मिक मूल्यों की प्राप्ति से न रहकर केवल मस्तिष्क के विकास से रह गया है ।'' - डा. राधाकृष्णन की उक्त पंक्तियां आज के भौतिक एवं आधुनिक युग में कटु सत्य हैं । आज सर्वत्र विज्ञान और प्रौद्योगिकी की धूम मची हुई है । इसने जीवन के प्रत्येक क्षेत्र को प्रभावित किया है, शिक्षा इससे वंचित नहीं है । विज्ञान और प्रौद्योगिकी के इस युग में ज्ञान का विस्फोट हुआ है, जिसने अध्यापक-छात्र संबंधों को भी प्रभावित किया है। अध्यापक-छात्र संबंधों को सिमटाकर कक्षा-कक्ष तक सीमित कर दिया है, उनकी भावनाएं बदल गयी हैं । भावना के बदल जाने से सब कुछ बदल जाया करता है । वह भावना ही थी कि गुरु के लिए उसके शिष्य ही सर्वस्व थे तो शिष्यों के गुण उनकी सबसे बड़ी पूंजी थे । इसलिए वह उन्हें उनकी क्षमता तथा योग्यता के अनुसार जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में दक्ष और निपुण बनाने का जी तोड़ प्रयास करते थे । राम जैसे आज्ञाकारी और अर्जुन जैसे धनुर्धर शिष्यों पर उन्हें गर्व होता था। वे लालच से दूर थे । सच्चा गुरु अमीर-गरीब, ऊंच-नीच, छोटे-बड़े का भेद नहीं बरतता; उसकी दृष्टि में कृष्ण और सुदामा दोनों समान हैं । कबीर ने तो गुरु को प्रभु से भी बढ़कर बताया है क्योंकि गुरु अज्ञान के अंधेरे से ज्ञान के उजाले के क्षितिज की राह दिखाता है । ज्ञान रश्मि के सरोवर से मोक्ष का मार्ग प्रशस्त करता है, सदगुणों व सही राह पर चलने की प्रेरणा देता है, अंगुली के बीच पेन पकड़ कर अक्षर ज्ञान देता है ।

समय और परिस्थितियों में सब कुछ बदल गया है । अध्यापकों को गुरु कहलवाना अटपटा लगने लगा है, वह गुरु भी नहीं रहा, न ही ज्ञान की दृष्टि और न ही सेवा भावना और शिष्य के प्रति लगाव की दृष्टि । गुरु के जिन गुणों का उल्लेख शास्त्रों और सद्ग्रन्थों में मिलता है, वे उनके व्यवहार से लुप्त होते जा रहे हैं । इसका परिणाम है कि विद्यार्थियों के व्यवहार से ईमानदारी, सादगी, पारस्परिक सहयोग, बड़ों का आदर, अध्ययन के प्रति लगाव, सेवा भावना, राष्ट्र-प्रेम आदि गुण कूच कर गये हैं और उनमें अनुशासनहीनता, अराजकता, सामाजिक रीतियों का उल्लंघन जैसे निन्दनीय कुकृत्यों की अति हो चली है । यही कारण है कि आज पाठ्यक्रम में मूल्यपरक शिक्षा की आवश्यकता हो रही है, पहले गुरु शिष्य को मूल्य अपने आचरण से सिखाते थे और किसी भी पाठशाला, मदरसा, गुरूकुल में मूल्यों के लिए कोई किताब या किताब का पाठ नहीं पढ़ाया जाता था। यह चिन्ता की बात है कि पिछले कुछ वर्षों से अध्यापकों की छवि गिरती ही चली जा रही है । नि:संदेह ऐसा होना कोई शुभ लक्षण नहीं क्योंकि भारतीय समाज और संस्कृति में अध्यापक को गुरु की संज्ञा दी गई है। भारत में गुरु को आध्यात्मिक नेता स्वीकारा गया है, जो समाज का पथ-प्रदर्शक होता है । ''अध्यापक होने का अर्थ है समाज परिवर्तन का माध्यम होना ।'' अध्यापक को एहसास होना चाहिए कि शिक्षा देना एक जनसेवा है । श्री अरविन्द ने कहा है - ''शिक्षक राष्ट्रीय संस्कृति का चतुर माली होता है । वह संस्कारों की जड़ों में खाद देता है और अपने श्रम से उन्हें सींच-सींचकर महाप्राण शक्तियां बनाता है ।'' जी. हाइगेहेट (1952) ने अपनी पुस्तक ''आर्ट आफ टीचिंग'' में शिक्षक की परिभाषा देते हुए लिखा है - एक अच्छा शिक्षक वह व्यक्ति है जो ''एक अच्छा पुरूष या महिला हो, जो विनोदप्रिय हो, जिसकी याददाश्त तेज हो और जो उदार हो, उसे अपने विषय का अच्छा ज्ञान तो होना ही चाहिए साथ ही यह भी जरूरी है कि वह इस ज्ञान के अनुसार आचरण करे और अपने विद्यार्थियों से स्नेह रखे ।'' विडम्बना यह है कि ऐसे अध्यापकों का अभाव बढ़ता चला जा रहा है जो देश की भावी पीढ़ी को संस्कारवान बनाने के लिए प्रतिबद्ध हों । नि:संदेह अध्यापकों के समक्ष आज

अनेक समस्याएं हैं लेकिन इसका अर्थ यह नहीं कि अध्यापक समुदाय अपने दायित्वों से विमुख हो जाये ।

आज अध्यापक को अपनी गिरती छवि को सुधारना ही होगा क्योंकि राष्ट्र के कर्णधारों के निर्माण का कार्य उसी के कन्धों पर है । विद्यार्थियों में अनुकरण करने की प्रवृत्ति होती है, वे सदैव अपने अध्यापकों को देखकर स्वयं भी वैसा ही करने तथा बनने का प्रयास करते हैं । गांधी जी इस तथ्य को स्वीकारते हुए कहते हैं - ''आचार्य तथा अध्यापकगण पुस्तकों के पृष्ठों से चरित्र नहीं सिखा सकते । चरित्र-निर्माण तो उनके जीवन से सीखा जाता है ।'' युग परिवर्तन से साथ-साथ आज विद्यार्थियों की सोच और समझ दोनों में परिवर्तन हुआ है । वे उपदेश सुनना कतई पसन्द नहीं करते, नैतिकता, सद्चरित्र की तासीर की चाशनी को जीवन उपयोगी शरबत बनाकर समय के गिलास में उन्मादित सीसों के संग पिलाने की कितनी भी कोशिश कर लीजिये, वह इन सब को देखना भी पसंद नही करते, गले से नीचे दो घूंट उतारना तो बहुत आगे की बात है । अत: अध्यापकों को पहले स्वयं गुड़ खाना बंद करना होगा तभी वह विद्यार्थियों को गुड़ खाने से मना कर सकेंगे । जिस समय कोई अध्यापक अपनी कक्षा में शिक्षण-कार्य कर रहा होता है तो उस समय सभी विद्यार्थियों की आंखें उस पर केन्द्रित होती हैं । वे अध्यापक को अलग-अलग पृष्ठभूमि से देख रहे होते हैं, उन्हें अध्यापक के भिन्न-भिन्न पहलू दिखाई दे रहे होते हैं । वे शिक्षक की केवल विद्वता ही नहीं देख रहे होते बल्कि उसके हाव-भाव, तौर-तरीके, उसकी पोशाक और अन्य बातों पर उनकी निगाहें लगी रहती हैं । इसके अलावा कक्षा-कक्ष के बाद भी बहुत से विद्यार्थी अध्यापक से प्रभावित होकर दिशा निर्देश लेने आते हैं। हमारा मानना है कि जब तक विद्यार्थी के मन में अध्यापक के प्रति आदर भाव नहीं है तब तक वह अध्यापक से कुछ नहीं सीख सकता। अध्यापकों को चाहिए कि वे विद्यार्थियों से सहृदय व्यवहार करें जिससे विद्यार्थी अपनी समस्या बेहिचक अध्यापक के सम्मुख रख सकें। अध्यापकों को जाति, धर्म, लिंग, आर्थिक , राजनैतिक, सामाजिक आधार पर विद्यार्थियों के साथ पक्षपात नहीं करना चाहिए। एक सच्चा अध्यापक ही अपने विद्यार्थियों को जीवन उपयोगी सच्ची शिक्षा दे सकता है । हमारे देश की शिक्षा-प्रणाली की एक बड़ी कमजोरी यह रही है कि अध्यापकों को उनके उत्तरदायित्वों के बारे में नहीं बताया जाता ।

शिक्षा ऐसी होनी चाहिए जो जिम्मेदारी, कर्तव्यनिष्ठा और चरित्रवान नागरिकों का निर्माण कर सके, दुर्भाग्य से हमारे देश में ऐसी शिक्षा का अभाव है जो श्रेष्ठ नागरिकों के निर्माण में सहायक हो सके । स्वामी विवेकानन्द ने स्वीकारा है ''आज हमें जिसकी वास्तविक आवश्यकता है, वह है - चरित्रवान स्त्री - पुरुष । किसी भी राष्ट्र का विकास और उसकी सुरक्षा बहुत कुछ उसके चरित्रवान नागरिकों पर निर्भर है ।'' मार्टिन लूथर की पंक्तियां भी इस संदर्भ में सच ही है - ''किसी राष्ट्र की संपन्नता न तो अधिक राजस्व प्राप्ति में है, न उसकी सुदृढ़ सुरक्षा व्यवस्था में और न ही उसके सुन्दर सरकारी भवनों में बल्कि राष्ट्र की सच्ची संपन्नता तो उसके प्रबुद्ध, सुशिक्षित एवं चरित्रवान नागरिकों से होती है । इन्हीं लोगों में राष्ट्र का सच्चा हित और शक्ति निहित है ।'' चरित्रवान व्यक्तियों की छाया में राष्ट्र एवं समाज अपने आप को सुरक्षित पाता है । निश्चित रूप से श्रेष्ठ एवं चरित्रवान नागरिकों के निर्माण में अध्यापकों की बहुत ही महत्वपूर्ण भूमिका है । अध्यापक ही विद्यार्थियों को अच्छे-बुरे के अन्तर का ज्ञान प्रदान करते हैं, ऐसा करके उन्हें संस्कारवान बनाते हैं ।

यह दुर्भाग्य है कि हमारे देश में शिक्षा को व्यक्तित्व-निर्माण से नहीं जोड़ा जा सका है । स्वतन्त्रता के बाद से व्यक्तित्व-निर्माण की दिशा में कहीं कोई ठोस कार्य नहीं हुआ है, जो कार्य हुआ भी है वह केवल कागजों तक ही सीमित होकर रह गया है। परिणाम यह है कि साक्षरता बढ़ने के साथ-साथ एक ऐसी उच्छृंखल पीढ़ी सामने आयी है जिसका देश की परम्पराओं और मूल्यों से कोई लेना देना नहीं। भले ही राष्ट्रीय शिक्षा-नीति का उद्देश्य भारत की साझा सांस्कृतिक विरासत और समतावादी लोकतंत्र की रक्षा के साथ वैज्ञानिक दृष्टिकोण को बढ़ावा देना हो, लेकिन यथार्थ यह है कि ऐसी शिक्षा का अभाव है जो भारत की भावी पीढ़ी को उन मूल्यों के प्रति प्रतिबद्ध बना पा रही हो जो मूल्य भारत की पहचान हैं। इस स्थिति में विद्यार्थियों के व्यक्तित्व निर्माण और कर्तव्यनिष्ठा का पाठ कौन पढ़ायेगा । अत: आज आवश्यकता है कि अध्यापक समुदाय अपने विद्यार्थियों में जीवन मूल्यों, त्याग, समर्पण, स्वाध्याय, नियमितता, निष्पक्षता, आत्मीयता, ईमानदारी, ज्ञान पिपासा आदि पर ध्यान दें जिसका अनुसरण कर विद्यार्थियों में सत्य, सेवा, मानव प्रेम, त्याग, कर्तव्यनिष्ठता, आत्मबल, विवेकशीलता, जैसे गुणों का विकास हो, उनके कन्धे मजबूत हों, उनके हौसले बुलन्द हों, तभी भारत का भविष्य उज्जवल होगा । एस. राधाकृष्णन ने चरित्र पर बल देते हुए सच ही कहा है - ''चरित्र भाग्य है । चरित्र वह वस्तु है जिस पर राष्ट्र के भाग्य का निर्माण होता है । तुच्छ चरित्र वाले मनुष्य श्रेष्ठ राष्ट्र का निर्माण नहीं कर सकते । किसी भी राष्ट्र के विकास और उसकी निधि के संचयन के लिए उस राष्ट्र के नागरिकों का चरित्र ही अतुलनीय भूमिका निभाता है । व्यक्ति के जीवन की पवित्रता ही समस्त चरित्र-निर्माण का आधार है । चरित्र के बिना शिक्षा और पवित्रता के बिना चरित्र व्यर्थ है ।'' ◆